International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 12-01-2026; Accepted: 11-02-2026; Published: 26-02-2026
Volume 12, Issue 1, 2026, Page No. 173-177

पत्थर, कथा और दिव्यता: तमिल संस्कृति में अरुपडै वीडू मंदिरों का समग्र अध्ययन

डॉ. डी. जयभारती
सहायक प्राध्यापक, एस.आर.एि, आई.एस.टी, वड़पलनी, चेन्नई, तमिलनाडु, भारत

सारांश
अरुपडै वीडू– भगवान मुरुगन के छह पवित्र धाम–तमिल धार्मिक इतिहास, पवित्र भूगोल और सांस्कृतिक पहचान में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। थिरुपरंकुंड्रम, तिरुचेंदूर, पलनी, स्वामिमलै , तिरुथनी और पलमुदिरचोलै स्थित ये मंदिर प्रारम्भिक संगम युग की प्राकृतिक उपासना परंपराओं से उत्पन्न होकर मिथकीय, साहित्यिक, स्थापत्य तथा सामाजिकदृधार्मिक विकास की विविध परतों से समृद्ध हुए हैं। पर्वतों, वनों और प्राकृतिक झरनों से जुड़े प्राचीन तमिल पारिस्थितिक उपासना–स्थलों से विकसित होकर, ये धाम पाण्ड्य, पल्लव , चोल, विजयनगर और नायक जैसे राजवंशों के संरक्षण में विशाल मंदिर संस्थानों के रूप में परिवर्तित हुए। इनसे संबद्ध मिथक मुरुगन के विविध आयामों–योद्धा, गुरु, संन्यासी, शांति–दाता और करुणामय देवता–को रूपायित करते हैं, जबकि अभिलेखीय तथा साहित्यिक स्रोत उनके ऐतिहासिक विकास और सांस्कृतिक महत्व को रेखांकित करते हैं।
यह अध्ययन साहित्यिक विश्लेषण, ऐतिहासिक अन्वेषण, स्थापत्य विवेचन और सांस्कृतिक नृविज्ञान को सम्मिलित करने वाली अंतर्विषयी पद्धति अपनाता है, जिसके माध्यम से यह दर्शाया गया है कि ये धाम तमिल आध्यात्मिकता के परस्पर जुड़े केंद्रों के रूप में कैसे कार्य करते हैं। भूमि–प्रतीकवाद, राजवंशी संरक्षण, अनुष्ठानों और कलात्मक अभिव्यक्तियों की भूमिका को रेखांकित करते हुए, यह अध्ययन दर्शाता है कि उपनिवेशकालीन परिवर्तनों और आधुनिक प्रशासनिक सुधारों के बीच भी ये मंदिर जीवंत तीर्थ–परंपराओं, उत्सवों और सांस्कृतिक कलाओं को निरंतर पोषित करते रहे हैं। अंततः, अरुपडै वीडू तमिल धार्मिक कल्पना के स्थायी प्रतीक के रूप में उभरते हैं, जहाँ पत्थर, कथा और दिव्यता एक सुसंगठित पवित्र विरासत में रूपांतरित होती है।

मूल शब्दः अरुपडै वीडू, भगवान मुरुगन, तमिल धार्मिक इतिहास, पवित्र भूगोल, सांस्कृतिक पहचान

मुरुगन तमिल धार्मिक चेतना में एक विशिष्ट और अत्यंत पूज्य स्थान रखते हैं। उन्हें वीरता, ज्ञान, करुणा और यौवन–ऊर्जा के प्रतीक देवता के रूप में सम्मानित किया जाता है। प्रारम्भिक तमिल स्रोतों में मुरुगन को एक स्वदेशी पर्वत–देवता के रूप में चित्रित किया गया है, जो वनों, गुफाओं और प्राकृतिक झरनों जैसे भू–दृश्यों से घनिष्ठ रूप से जुड़े थे। ये ही स्थल उनकी उपासना के आरंभिक केंद्र रहे [1, 2]। दक्षिण भारत तथा वैश्विक तमिल प्रवास समुदाय में स्थित अनेक मुरुगन मंदिरों में, अरुपडै वीडू –छह पवित्र धाम–उनकी पौराणिक कथाओं और भक्तिकर्म परंपराओं से सर्वाधिक निकटता से जुड़े माने जाते हैं। तिरुमुरुकाट्टुपडै में उल्लिखित ये धाम एक पवित्र भूगोल का निर्माण करते हैं, जो तमिल क्षेत्र में मुरुगन के दिव्य कर्मों और आध्यात्मिक गुणों का मानचित्र प्रस्तुत करता है [3]।
इन छह मंदिरों में से प्रत्येक मुरुगन के जीवन–वृत्त के एक विशिष्ट मिथकीय प्रसंग से संबंधित है–थिरुपरंकुंड्रम में दिव्य विवाह, तिरुचेंदूर में सुरपद्मन पर विजय, पलनी में विरक्ति एवं आत्मबोध, स्वामिमलै में प्रणव–उपदेश, तिरुथनी में शांति–प्राप्ति, और पलमुदिरचोलै में करुणा एवं सरल लीला। ये कथाएँ आत्म–साक्षात्कार, कर्तव्य, विनम्रता, धर्म–निष्ठा तथा दिव्य अनुग्रह जैसे दार्शनिक मूल्यों को व्यक्त करती हैं [4]। ये मंदिर मुरुगन की उपासना के उन चरणों को भी प्रतिबिंबित करते हैं, जिनमें आदिम प्राकृतिक स्थलों से विकसित होकर उपासना ने सुदृढ़ मंदिर–परंपरा तथा राजवंशी संरक्षण के माध्यम से संस्थागत रूप धारण किया। मुरुगन का पर्वतों, वनों तथा जलस्रोतों से गहरा संबंध तमिल धार्मिकता की मूलभूत परत को दर्शाता है, जिसमें पवित्र भूगोल और काव्यात्मक संवेदना मिलकर उन्हें एक संस्कृति–निष्ठ देवता के रूप में स्थापित करती हैं [16]।
मुरुगन के मंदिरों पर पूर्ववर्ती शोध साहित्य, इतिहास, पुरातत्त्व, नृविज्ञान और साहित्यिक अध्ययन जैसे अनेक विषयों के माध्यम से विस्तृत हुआ है [5, 6]। इन आधारों पर यह अध्ययन एक समग्र पद्धति अपनाता है, जो मिथकीय उत्पत्ति, ऐतिहासिक विकास, स्थापत्य अभिव्यक्ति, अनुष्ठान–परंपराओं और सामाजिक–सांस्कृतिक प्रभाव के माध्यम से अरुपडै वीडू के बहुआयामी स्वरूप को समझने का प्रयास करता है। इस प्रकार शोधपत्र यह दर्शाता है कि प्रत्येक धाम तमिल आध्यात्मिक पहचान में किस प्रकार योगदान देता है तथा कैसे ये मंदिर एक सुसंगठित पवित्र जाल के रूप में कथा, भू–दृश्य और दिव्य अनुभव को परस्पर जोड़ते हैं।

1. पौराणिक एवं साहित्यिक आधार

मुरुगन से संबंधित पौराणिक एवं साहित्यिक परंपराएँ अरुपडै वीडू के स्वरूप को समझने की सबसे प्रारम्भिक और प्रभावशाली आधार–रेखा प्रस्तुत करती हैं। ये परंपराएँ स्वदेशी तमिल आस्थाओं, शास्त्रीय काव्य–परंपराओं और बाद की संस्कृत पौराणिक कथाओं के संगम पर विकसित हुईं। संगम साहित्य में मुरुगन को मुख्यतः कुरिंजी (पर्वतीय) भू–दृश्य के युवा, वीर और संरक्षक देवता के रूप में चित्रित किया गया है, जो प्रेम, शिकार और रक्षा से संबद्ध हैं। इस प्रकार उनकी उपासना पहाड़ी एवं वन्य पारिस्थितिकी के भीतर स्वाभाविक रूप से स्थापित होती है [1, 2]।
तिरुमुरुकाट्टुपडै—एक महत्त्वपूर्ण संगम काव्य–छह पवित्र धामों का पहला व्यवस्थित विवरण प्रस्तुत करता है। यह काव्य उनके प्राकृतिक दृश्य, अनुष्ठानिक प्रक्रियाएँ, और भक्त–समाज का सजीव वर्णन देता है। पाठ इन मंदिरों को अलग–थलग स्थलों के रूप में नहीं, बल्कि एक सुसंगठित तीर्थ–परंपरा के रूप में प्रस्तुत करता है, जो गहन धार्मिक कल्पना से परिपोषित है [3]। इन प्रारम्भिक स्रोतों में मुरुगन को भक्तों के निकट एवं करुणामय रक्षक के रूप में चित्रित किया गया है। उपरांत काल में संस्कृत ग्रंथ स्कन्द पुराण तथा तमिल कृतियाँ जैसे कंद पुराणम् ने मुरुगन की पौराणिक कथाओं को विस्तारित किया। इनमें सुरपद्मन–वध (तिरुचेंदूर), दिव्य विवाह (थिरुपरंकुंड्रम), तथा प्रणव–उपदेश (स्वामि मलै) जैसी घटनाएँ शामिल हैं, जिन्होंने

मंदिरों की धार्मिक पहचान और अनुष्ठानिक रीति को आकार दिया [4]।

मध्यकालीन भक्तिकाव्यकारों ने इन धामों के महत्व को और ऊँचा किया। अरुणगिरिनाथर के तिरुप्पुगऴ् ने इन मंदिरों को काव्य–संगीत परंपरा में पवित्र आयाम प्रदान किया तथा मुरुगन–भक्ति को भावात्मक एवं दार्शनिक गहराई दी [7]। इन रचनाओं ने मंदिरों को केवल भौतिक उपासना–स्थलों के रूप में नहीं, बल्कि आध्यात्मिक अनुभव के भाव–भू–दृश्यों के रूप में प्रतिष्ठित किया, जहाँ भक्त दिव्य उपस्थिति का साक्षात्कार करते हैं।

शास्त्रीय तमिल साहित्य और विशेष रूप से संगम कृतियाँ मुरुगन को उस देवता के रूप में स्थापित करती हैं, जिसकी प्रतीकात्मक एवं भावात्मक प्रतिध्वनि तमिल सांस्कृतिक स्मृति में अंतर्निहित है। ज़्वेलेबिल ने अपने महत्वपूर्ण अध्ययन में दर्शाया है कि कुरिंजी भू–दृश्य और मुरुगन की उपस्थिति के बीच यह संबंध तमिल धार्मिक–सांस्कृतिक परंपरा की मूलभूत विशेषता है [16]। इस प्रकार, पौराणिक और साहित्यिक परंपराएँ मिलकर अरुपडै वीडू की प्रतीक–व्यवस्था को आकार देती हैं और उन्हें एक लंबी, विकसित होती सांस्कृतिक स्मृति के भीतर प्रतिष्ठित करती हैं, जो आज भी तमिल धार्मिकता को गहन रूप से प्रभावित करती है।

2. ऐतिहासिक विकास एवं राजवंशी संरक्षण

1. प्रारम्भिक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

अरुपडै वीडू का सबसे प्रारम्भिक इतिहास मुरुगन की उस यात्रा को दर्शाता है, जिसमें वे आदिवासी पर्वत–देवता से विकसित होकर समस्त तमिल प्रदेश के सार्वभौमिक देवता के रूप में प्रतिष्ठित हुए। संगम साहित्य में प्राकृतिक स्थलों–गुफाओं, झरनों, पथरीले पर्वतों–पर की जाने वाली उपासना का विवरण मिलता है, जहाँ तपस्वी, शिकारी और ग्रामवासी दिव्य उपस्थिति का अनुभव करते थे [1]। प्रारम्भ में ये स्थल स्थानीय और अनौपचारिक थे, किन्तु ईसा पूर्व तृतीय शताब्दी से ईसा की तृतीय शताब्दी के बीच ये प्रमुख तीर्थ–स्थलों के रूप में विकसित होने लगे, जिसका प्रमाण अनुष्ठानों, भेंटों और धार्मिक नेटवर्कों की उभरती संरचना से मिलता है।

दक्षिण भारत में प्रारम्भिक राज्यों के उदय के साथ मुरुगन उपासना क्रमशः संस्थागत होती गई। पल्लव, पाण्ड्य और चोल राजसत्ताओं ने स्थानीय उपासना–परंपराओं को अपने व्यापक धार्मिक ढाँचों में समाहित किया। भूमि अनुदान, पुजारी वंशावली और स्थायी मंदिर–निर्माण इस परिवर्तन की प्रमुख विशेषताएँ थीं [2]। इस काल के अभिलेखों में दीप–प्रज्वलन, उत्सव–व्यय, नित्य–नैवेद्य और मंदिर–रखरखाव के लिए दान का उल्लेख मिलता है, जो इन धामों की सामाजिकदृआर्थिक संरचना को स्पष्ट करता है [5]।

2. तमिल इतिहास में राजवंशी संरक्षण

अरुपडै वीडू का स्थापत्य, अनुष्ठानिक और सांस्कृतिक विकास विभिन्न राजवंशों के संरक्षण से गहराई से जुड़ा है:

पलव (6वीं–9वीं शताब्दी)

पलवों ने थिरुथानी और स्वामिमलाई जैसे स्थलों पर शैलकृत तथा प्रारम्भिक संरचनात्मक मंदिर–रूपों को विकसित किया, जिससे प्राकृतिक उपासना स्थलों का रूपांतरण संस्थागत मंदिर परंपरा में हुआ [6]।

पाण्ड्य (6वीं–14वीं शताब्दी)

पाण्ड्यों ने थिरुपरंकुंड्रम और पझमुदिरचोलै जैसे पहाड़ी एवं वन–क्षेत्र आधारित मंदिरों का विस्तार किया। उन्होंने मंडप, स्तंभयुक्त सभाएँ और अनुष्ठानिक प्रकोष्ठ विकसित किए, जिससे मंदिर प्रशासन और धार्मिक रीति अधिक सुव्यवस्थित हुए [8]।

चोल (9वीं–13वीं शताब्दी)

चोलों ने मुरुगन उपासना को भव्य स्थापत्य, उत्कृष्ट कांस्य–प्रतिमा–परंपरा, और व्यापक भूमि–अनुदान के माध्यम से सुदृढ़ किया। पलनी और स्वामिमलाई के मंदिरों में इनके महत्वूपर्ण योगदान दर्ज हैं [2]।

विजयनगर साम्राज्य (14वीं–16वीं शताब्दी)

इस काल में मंदिर परिसरों में दुर्ग–प्राचीरें, स्तंभित मंडप और विशाल गोपुर संरचनाएँ जोड़ी गईं, जिससे उत्सव–यात्राएँ और अनुष्ठानिक भव्यता और बढ़ी [9]।

नायक (16वीं–18वीं शताब्दी)

नायकों के काल में मंदिरों को उनके वर्तमान स्वरूप की सबसे विशाल और विशिष्ट स्थापत्य उपलब्धियाँ प्राप्त हुईं—ऊँचे गोपुर, विस्तृत मंडप, प्रकोष्ठों का विस्तार, तथा स्कन्द षष्ठी एवं पङ्गुनी उत्तिरम् जैसे उत्सवों का औपचारिक निर्धारण [10]।

औपनिवेशिक काल में यद्यपि मंदिर अर्थव्यवस्थाओं पर राजस्व–प्रणालियों ने प्रभाव डाला, परंतु उस समय के गज़ेटियर, अभिलेख–सर्वेक्षण और पुरातात्त्विक विवरणों ने इन मंदिरों के स्थापत्य और अनुष्ठानिक स्वरूप का महत्वपूर्ण संरक्षण किया।

मंदिरों के ऐतिहासिक विकास

थिरुपरंकुंड्रम

थिरुपरंकुंड्रम मुरुगन और देवसेना के दिव्य–विवाह का स्थल होने के कारण अत्यंत पवित्र माना जाता है। प्रारम्भ में यह एक प्राकृतिक पहाड़ी–धाम था, जिसे पाण्ड्यों ने शैलकृत मंदिर में रूपांतरित किया और गुफा–गर्भगृह को औपचारिक संरचना प्रदान की [8]। चोल और नायक शासकों ने मंडपों, प्रकोष्ठों और उत्सवीय संरचनाओं का विस्तार किया, जिससे यह स्थल विवाह–संस्कृतियों और कन्द –षष्ठी के प्रमुख केंद्र के रूप में प्रतिष्ठित हुआ।

तिरुचेंदूर

समुद्रतट पर स्थित तिरुचेंदूर एक अद्वितीय तटीय मंदिर–रूप प्रस्तुत करता है। यह प्रारम्भ में समुद्री समुदायों का संरक्षक–धाम था, जहाँ नाविक और मत्स्यजीवी मुरुगन के संरक्षण की कामना करते थे [11]। पाण्ड्य और नायक राजवंशों ने खारे जलवायु के अनुरूप टिकाऊ पत्थर, मंडप तथा तटीय सुरक्षा संरचनाएँ निर्मित कीं। औपनिवेशिक युग में समुद्री अपरदन से रक्षा हेतु महत्वपूर्ण संरक्षण कार्य किए गए।

पलनी

पलनी का इतिहास सिद्धर परंपरा से गहराई से सम्बद्ध है, विशेषकर सिद्धर बोघर, जिन्हें नवपाषाण प्रतिमा की प्रतिष्ठा का श्रेय दिया जाता है। प्रारम्भ में यह स्थल तपस्वियों और योगिक परंपराओं का केंद्र रहा, जिसे बाद में चोल और नायक शासकों ने मार्ग–विकास, मंडप–निर्माण, और अनुष्ठानिक संगठन के माध्यम से भव्य मंदिर रूप प्रदान किया [2]। पलनी धार्मिक विरक्ति, तप और आत्मबोध का प्रतीक स्थल रहा है।

स्वामि मलै

स्वामिमलाई का विकास उसके प्रमुख धार्मिक महत्व–प्रणव मन्त्र के उपदेश–से प्रेरित हुआ। चोलों ने प्रारम्भिक मंदिर–ढाँचा विकसित किया, जबकि नायकों ने गोपुर, मंडप और अनुष्ठानिक प्रकोष्ठों का विस्तार किया। यह क्षेत्र पारंपरिक कांस्य–प्रतिमाशिल्प का प्रमुख केंद्र भी बना, जहाँ शिल्प शास्त्र आधारित कारीगरी आज भी जीवित है [12]।

तिरुथनी

तिरुथानी वह पर्वत–धाम है जहाँ मुरुगन युद्ध के उपरांत अंतः शांति प्राप्त करने हेतु स्थित हुए। पलवों के अभिलेख इसकी प्राचीनता सिद्ध करते हैं, जबकि विजयनगर और नायक शासकों ने मार्ग, मंडप और सुरक्षा–दीवारों का निर्माण किया [9]। यह स्थल मानसिक शांति, समन्वय और आध्यात्मिक स्थिरता की खोज करने वाले भक्तों का केन्द्र है।

पलमुदिरचोलै

अळगर पहाड़ियों में स्थित पझमुदिरचोलै प्राकृतिक समृद्धि और पारिस्थितिक पवित्रता के लिए प्रसिद्ध है। संगम साहित्य में इसका वर्णन फलों, झरनों और हरे–भरे जंगलों से पूर्ण एक दिव्य स्थल के रूप में मिलता है [1]। पाण्ड्य और नायक शासकों ने यहाँ न्यूनतम स्थापत्य हस्तक्षेप करते हुए प्राकृतिक वातावरण और उपासना के बीच समन्वय बनाए रखा।

स्थापत्य एवं सांस्कृतिक महत्व

अरुपडै वीडू के छहों मंदिर द्रविड़ स्थापत्य परंपरा के विकास को समग्र रूप में प्रस्तुत करते हैं, साथ ही प्रत्येक धाम अपने विशिष्ट पारिस्थितिक–भौगोलिक परिवेश से गहराई से जुड़ा हुआ है। थिरुपरंकुंड्रम का शैलकृत गर्भगृह प्रारम्भिक तमिल गुफा–स्थापत्य का महत्वपूर्ण उदाहरण है; तिरुचेंदूर का मंदिर तटीय पर्यावरण के अनुरूप अनुकूलित इंजीनियरिंग का अनूठा रूप है, जहाँ खारे समुद्री वातावरण और अपरदन से सुरक्षा हेतु विशेष निर्माण तकनीकों का उपयोग किया गया [7]। पलनी और तिरुथानी पर्वत–आधारित मंदिरों की परंपरा को आगे बढ़ाते हैं, जहाँ पर्वतारोहण आध्यात्मिक उन्नयन और तप–साधना का प्रतीक बन जाता है। स्वामिमलाई के साठ सीढ़ियाँ ब्रह्मांडीय काल–चक्र और आध्यात्मिक प्रगति को संकेतित करती हैं, जबकि पझमुदिरचोलै में स्थापत्य और वन–पर्यावरण का संतुलित सह–अस्तित्व दिखाई देता है।

सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में, ये मंदिर तमिल कला–परंपराओं के जीवंत केंद्र हैं। तिरुप्पुगऴ गायन, भरतनाट्यम, नाद–वादन, और काव्य–परंपराएँ इन मंदिरों में निरंतर विकसित होती रही हैं। स्कन्द षष्ठी, थैपूसम् और पङ्गुनी उत्तिरम् जैसे भव्य उत्सव लाखों भक्तों को एकत्रित करते हैं और तमिल सामुदायिक–सांस्कृतिक एकता को सुदृढ़ बनाते हैं [7]।

कवडी–प्रथा, अन्नदानम् और मनौती–पूर्ति जैसे अनुष्ठान व्यक्तिगत भक्ति को सामुदायिक कल्याण से जोड़ते हैं। स्वामिमलाई के कांस्य–शिल्पी समुदाय जैसे पारंपरिक शिल्प–समूह शिल्प शास्त्र आधारित ज्ञान–परंपरा को पीढ़ी–दर–पीढ़ी संरक्षित रखते हैं, जिससे यह क्षेत्र धार्मिक, आर्थिक और कलात्मक दृष्टि से समृद्ध होता है [12]।

अरुपडै वीडू मंदिरों का महत्व

अरुपडै वीडू मुरुगन के विविध आध्यात्मिक आयामों–योद्धा, गुरु, संन्यासी, शांति–दाता और करुणामयी देवता–का समेकित प्रतिरूप प्रस्तुत करते हैं। प्रत्येक मंदिर अपने विशिष्ट भौगोलिक, पौराणिक और सांस्कृतिक संदर्भों के माध्यम से मुरुगन की दिव्य लीला के एक विशिष्ट पक्ष को अभिव्यक्त करता है। ये धाम मिलकर एक सुसंगठित पवित्र भू–दृश्य का निर्माण करते हैं, जिसने सदियों से तमिल भक्तिधारा को प्रेरित किया है और आज भी धार्मिक आचरण तथा सामुदायिक पहचान को गहराई से प्रभावित करता है [18]।

1. थिरुपरंकुंड्रम – मंदिर का महत्व

थिरुपरंकुंड्रम वह पवित्र स्थल है जहाँ मुरुगन और देवसेना का दिव्य विवाह संपन्न हुआ, जो धर्म और ब्रह्मांडीय संतुलन की पुनर्स्थापना का प्रतीक है। संगम साहित्य में उल्लिखित प्रारम्भिक स्थलों में शामिल यह धाम ऐतिहासिक निरंतरता और धार्मिक गहराई का प्रतिनिधित्व करता है [1, 3]। पाण्ड्यकालीन शैल—त गर्भगृह प्राकृतिक पर्वतीय संरचना और पवित्र स्थापत्य के अद्वितीय संयोजन को दर्शाता है [8]। यहाँ के अनुष्ठान पारिवारिक समरसता, कृतज्ञता और दिव्य अनुग्रह पर बल देते हैं। तिरुप्पुगऴ में इसकी व्यापक उपस्थिति इस मंदिर को तमिल भक्ति–संस्कृति में एक स्थायी स्थान प्रदान करती है [7, 15]। थिरुपरंकुंड्रम अरुपडै वीडू के आधारभूत धाम के रूप में विशिष्ट महत्व रखता है।

2. तिरुचेंदूर – मंदिर का महत्व

तिरुचेंदूर मुरुगन की सुरपद्मन पर विजय का तटीय रणक्षेत्र है, जो धर्म की विजय और दैवीय हस्तक्षेप का महत्वपूर्ण प्रतीक माना जाता है। समुद्रतट पर स्थित यह मंदिर द्रविड़ स्थापत्य की अनुकूलन–क्षमता का उत्कृष्ट उदाहरण है, जहाँ भवनों को खारे समुद्री वातावरण और तेज़ हवाओं से सुरक्षित रखने के लिए विशेष तकनीकें अपनाई गईं [11]। स्कन्द षष्ठी के दौरान सुरसम्हारम् का नाट्य–पुनर्सृजन विशाल जनसमूह को आकर्षित करता है और सामुदायिक स्मृति को सुदृढ़ करता है [14]। साहित्यिक परंपराओं में मुरुगन को करुणामय योद्धा के रूप में चित्रित किया गया है, जो मानवता की रक्षा के लिए तत्पर रहते हैं [4]। अपनी समुद्री विरासत और पौराणिक महत्ता के कारण तिरुचेंदूर मिथक, पारिस्थितिकी और अनुष्ठान का अनोखा संगम प्रस्तुत करता है।

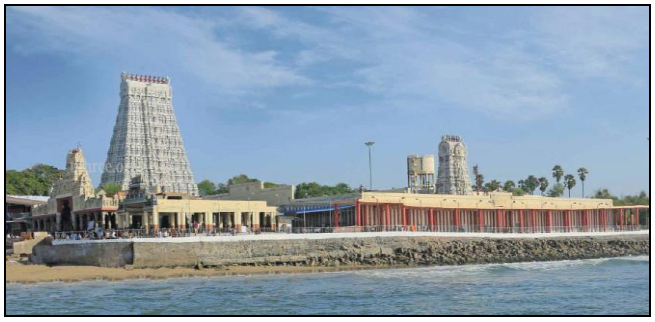

3. पलनी – मंदिर का महत्व

पलनी मुरुगन की त्याग और आत्मबोध की कथा का केंद्र है, जहाँ वे दिव्य फल–प्रसंग में सांसारिक आकर्षण का परित्याग कर आत्मज्ञान की ओर उन्मुख होते हैं। सिद्धर बोघर द्वारा प्रतिष्ठित नवपाषाण प्रतिमा ने इस स्थल को रहस्यवाद, अल (रसायन–विद्या), और उपचारात्मक परंपराओं का प्रमुख केंद्र बनाया है [2, 17]। कठोर पर्वतारोहण साधना और मानसिक अनुशासन का प्रतीक है, जबकि कवडी, सिर–शोधन और उपवास जैसे अनुष्ठान गहन व्यक्तिगत भक्ति को अभिव्यक्त करते हैं [7]। भारत के सबसे व्यस्त तीर्थस्थलों में से एक होने के कारण, पलनी धार्मिक, आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यधिक प्रभावशाली है। तिरुप्पुगऴ में इसकी प्रबल उपस्थिति इस स्थल को तप एवं काव्य–परंपरा के अद्वितीय मेल के रूप में प्रतिष्ठित करती है [15]।

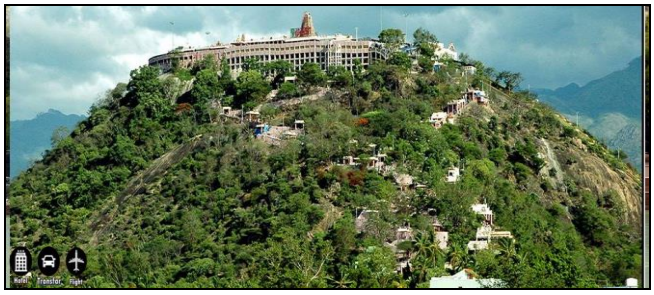

4. स्वामिमलाई – मंदिर का महत्व

स्वामिमलाई वह पवित्र स्थल है जहाँ मुरुगन ने शिव को प्रणव मंत्र (ओम) का गूढ़ अर्थ समझाया, जिससे पारंपरिक दैवीय श्रेणीकरण उलट जाता है और ज्ञान–प्रधान दिव्यता की प्रतिष्ठा होती है। मंदिर की साठ सीढ़ियाँ आध्यात्मिक ज्ञान के आरोहण और ब्रह्मांडीय चक्रों का प्रतीक मानी जाती हैं [4, 16]। शिक्षा, दीक्षा और बौद्धिक उपलब्धियों से जुड़े अनुष्ठान इसे ज्ञान–केंद्रित मंदिर के रूप में विशेष पहचान दिलाते हैं। यह क्षेत्र पारंपरिक कांस्य–प्रतिमा–शिल्प का महत्वपूर्ण केंद्र भी है, जहाँ शिल्प शास्त्र की परंपराएँ आज भी संरक्षित हैं [12]। इस प्रकार स्वामिमलाई सिद्धांत, कला और भक्ति का एक सुसंयोजित रूप प्रस्तुत करता है।

5. तिरुथनी – मंदिर का महत्व

तिरुथनी वह स्थल है जहाँ मुरुगन युद्धोपरांत आंतरिक शांति की प्राप्ति करते हैं। यह धाम भावनात्मक संतुलन, मानसिक शुद्धि और सौहार्द्र का प्रतीक है। पर्वत–शिखर पर स्थित यह मंदिर ध्यान और आत्मचिंतन हेतु उपयुक्त वातावरण प्रदान करता है, जहाँ विस्तृत प्राकृतिक दृश्य आध्यात्मिक धैर्य को सुदृढ़ करते हैं [9]। पलव, विजयनगर और नायक राजवंशों ने मंदिर की संरचना में मार्ग, मंडप और सुरक्षा–दीवारों का विकास किया, जिससे इसका शांतिपूर्ण वातावरण संरक्षित रहा [6]। भक्त यहाँ मानसिक कल्याण, पारिवारिक सामंजस्य और नई आरंभिक सफलताओं की कामना से आते हैं [14]। तिरुप्पुग़ज़ में इसकी प्रमुख उपस्थिति इसे काव्यिक तथा आध्यात्मिक महत्ता प्रदान करती है [15]।

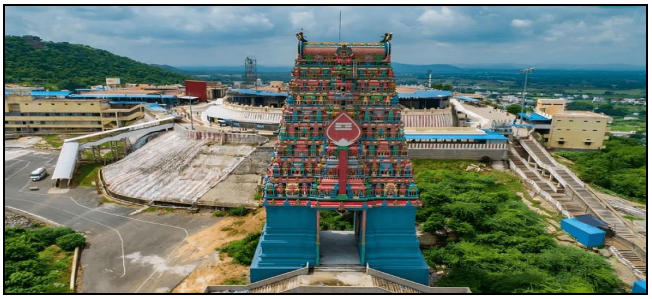

6. पलमुदिरचोलै – मंदिर का महत्व

पलमुदिरचोलै अळगर पहाड़ियों के सघन वनों में स्थित एक अत्यंत पवित्र और प्राकृतिक धाम है, जहाँ मुरुगन की करुणा, सरलता और सहज पहुंच का विशेष अनुभव मिलता है। संगम साहित्य में इस स्थल का वर्णन फलों, पुष्पों, झरनों और हरित–वनस्पति से परिपूर्ण स्थान के रूप में किया गया है, जहाँ मुरुगन के साथ मानवीय निकटता और लालित्य का अनुभव होता है [1, 15]। यह धाम न्यूनतम स्थापत्य हस्तक्षेप के साथ प्राकृतिक पारिस्थितिकी की पवित्रता को संरक्षित रखता है [8]। भक्त यहाँ फल, मधु और सरल प्रार्थनाओं द्वारा अपनी भक्ति व्यक्त करते हैं। अरुपडै वीडू यात्रा के अंतिम धाम के रूप में पलमुदिरचोलै पूर्णता, संतुष्टि और प्रकृति–भक्ति के अद्वितीय सामंजस्य को दर्शाता है।

ब्रिटिश एवं आधुनिक काल

औपनिवेशिक काल ने इन मंदिरों की प्रशासनिक संरचना और आर्थिक आधार पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला, यद्यपि ब्रिटिश शासन के दौरान मंदिरों का राजस्व–व्यवस्थापन पारंपरिक प्रणालियों से अलग रूप लेता गया। भूमि–आधारित आय व्यवस्था में किए गए परिवर्तनों ने मंदिरों की आर्थिक स्थिति को प्रभावित किया, जिससे स्थानीय समुदायों और सार्वजनिक संगठनों की प्रशासन में बढ़ती भागीदारी आवश्यक हो गई। इसके साथ ही, ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा तैयार किए गए गज़ेटियर, अभिलेखीय सर्वेक्षण और पुरातात्त्विक प्रतिवेदन इन मंदिरों की स्थापत्य विशेषताओं, अनुष्ठानिक प्रक्रियाओं, प्रशासनिक प्रथाओं और सामाजिक भूमिका को संरक्षित करने में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुए [5]। इन अभिलेखों ने ऐतिहासिक सूचना, शिलालेखीय विवरण और सांस्कृतिक संरचनाओं के दस्तावेज़ीकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में, ब्रिटिश नीतियों के परिणामस्वरूप मंदिर प्रबंधन में जनता की भागीदारी धीरे–धीरे बढ़ी, जिससे न्यास–समितियों और सार्वजनिक प्रबंधन निकायों की स्थापना को बल मिला। स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात, हिन्दू धार्मिक एवं धर्मार्थ निधि (HR&CE) विभाग के गठन ने इन मंदिरों के प्रशासन को एक नवीन और व्यवस्थित ढाँचा प्रदान किया। इस विभाग ने वित्तीय पारदर्शिता, अनुष्ठानिक निरंतरता, और संरक्षण–कार्य के लिए सुदृढ़ प्रबंधन प्रणाली विकसित की, जिसके अंतर्गत गोपुरों का पुनर्स्थापन, पर्वतीय मार्गों का संरक्षण, तटीय क्षेत्रों–विशेषकर तिरुचेंदूर–के लिए समुद्री सुरक्षा उपाय, और शिलालेखीय दस्तावेज़ीकरण को महत्त्व दिया गया [13]।

आधुनिकीकरण के दौर में अवसंरचनात्मक और तकनीकी सुधारों ने तीर्थ–अनुभव को और सुगम बनाया है। उदाहरणतः पलनी में रोपदृवे, डिजिटल टिकटिंग, तीर्थ–मार्गों का विस्तार, सुविधाजनक आवास, तथा उत्सव–व्यवस्थापन की उन्नत प्रणालियाँ लाखों भक्तों की पहुँच और सुविधा को मजबूत करती हैं। इसके अतिरिक्त, वैश्विक तमिल प्रवास समुदाय में मुरुगन–उपासना का पुनरुत्थान–विशेषकर थैपूसम् और स्कन्द षष्ठी जैसे त्योहारों के अंतर्राष्ट्रीय आयोजन–अरुपडै वीडू के सांस्कृतिक प्रभाव को विश्व–स्तर पर विस्तारित करता है [14]।

इस प्रकार, ब्रिटिश और आधुनिक काल न केवल इन मंदिरों की ऐतिहासिक और स्थापत्य विरासत को संरक्षित करते हैं, बल्कि उन्हें आधुनिक सामाजिक–सांस्कृतिक आवश्यकताओं के अनुरूप ढालते हुए वैश्विक तमिल पहचान का महत्वपूर्ण आधार भी बनाते हैं।

सामाजिक–धार्मिक प्रभाव

अरुपडै वीडू केवल धार्मिक उपासना–स्थल नहीं हैं, बल्कि तमिल समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक ढाँचे को आकार देने वाले महत्वपूर्ण केंद्र भी हैं। प्रतिवर्ष लाखों भक्त इन मंदिरों में कवडी, उपवास, पर्वतारोहण, तथा अन्य देह–आधारित अनुष्ठानों में भाग लेते हैं, जो सामुदायिक एकजुटता, अनुशासन और आध्यात्मिक समर्पण को सुदृढ़ करते हैं। अन्नदानम् जैसी प्रथाएँ सामाजिक समानता और उदारता के आदर्श को मूर्त रूप देती हैं

और जाति, वर्ग तथा सामाजिक विभाजनों को कमज़ोर करती हैं [7, 18]। इन दान–अनुष्ठानों में सहभागिता से भक्त समुदाय के भीतर परस्पर सहयोग की भावना विकसित होती है।

आर्थिक दृष्टि से भी ये मंदिर अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। स्थानीय कारीगरों, व्यापारियों, परिवहन कर्मियों, कृषि समुदायों और सेवा–क्षेत्र से जुड़े असंख्य लोगों की आजीविका इन मंदिरों की गतिविधियों से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी है। विशेषकर पलनी और तिरुचेंदूर के तीर्थ–अर्थतंत्र क्षेत्रीय पर्यटन, व्यापार–विस्तार और रोजगार–सृजन में प्रमुख भूमिका निभाते हैं [11]। धार्मिक और दार्शनिक रूप से, ये मंदिर नैतिक मूल्यों—साहस, करुणा, संयम, विनम्रता, त्याग और आत्म–साक्षात्कार–को बढ़ावा देते हैं। मुरुगन की कथाओं और उपदेशों में निहित ये अवधारणाएँ भक्तों के व्यक्तिगत और सामुदायिक जीवन में एक नैतिक दिशा प्रदान करती हैं [4, 17]।

भारत से बाहर भी इन मंदिरों का धार्मिक–सांस्कृतिक प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। मलेशिया, सिंगापुर, श्रीलंका, मॉरिशस, ऑस्ट्रेलिया, यूरोप और उत्तर अमेरिका में स्थित मुरुगन मंदिर तथा आयोजित होने वाले कवडी उत्सव तमिल डायस्पोरा की सांस्कृतिक निरंतरता को बनाए रखते हैं। इन वैश्विक मंदिरों में अरुपडै वीडू से प्रेरित स्थापत्य और अनुष्ठानिक ढाँचे अपनाए जाते हैं, जिससे तमिल धार्मिक पहचान अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सुदृढ़ होती है। इस प्रकार, अरुपडै वीडू तमिल समाज में धार्मिक आस्था, सांस्कृतिक गतिशीलता, सामाजिक समरसता और वैश्विक पहचान–इन सभी के केंद्रबिंदु के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

उपसंहार

अरुपडै वीडू तमिल सभ्यता की आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक गहराई को समेकित रूप में अभिव्यक्त करते हैं। इन मंदिरों के भू–दृश्य, पौराणिक कथाएँ, स्थापत्य परंपराएँ, अनुष्ठानिक प्रथाएँ और इनके आसपास विकसित सामुदायिक जीवन, मुरुगन की बहुआयामी दिव्यता–योद्धा, गुरु, संन्यासी, शांति–दाता और करुणामय देवता–को मूर्त रूप देते हैं। प्राचीन प्राकृतिक उपासना–स्थलों से लेकर वैश्विक तमिल पहचान के प्रतीकों तक की इन मंदिरों की यात्रा उनकी परंपरा, निरंतरता और सांस्कृतिक दृढ़ता का प्रमाण है। इन मंदिरों की स्थायी विरासत पत्थर (स्थापत्य), कथा (मिथक एवं साहित्य), और दिव्यता (अनुभूत आध्यात्मिक अनुभव) के समन्वय में निहित है, जहाँ ये तीनों तत्व एक व्यापक पवित्र परंपरा का निर्माण करते हैं। यह पवित्र नेटवर्क न केवल धार्मिक आस्था को आकार देता है, बल्कि तमिल समाज की सांस्कृतिक संवेदना, सामुदायिक एकता और नैतिक आदर्शों को भी दृढ़ करता है। पर्यावरणीय प्रतीकवाद, राजवंशी संरक्षण, कलात्मक अभिव्यक्तियों और आधुनिक भक्तिकर्म प्रणालियों के समन्वय से अरुपडै वीडू आज भी जीवंत मंदिर–परंपराओं के रूप में विकसित हो रहे हैं। वे न केवल व्यक्तिगत आध्यात्मिक अनुभव को समृद्ध करते हैं, बल्कि सामूहिक सांस्कृतिक पहचान को भी निरंतर प्रेरित और सशक्त बनाते हैं। इस प्रकार, अरुपडै वीडू तमिल धार्मिक–सांस्कृतिक कल्पना का एक अनुपम और शाश्वत अंग बने हुए हैं।

संदर्भ सूची

1. शन्मुगम, पी. (1992). संगम युग में मुरुगन उपासना के संदर्भ. जर्नल ऑफ़ तमिल स्टडीज़, 43.
2. चम्पकलक्ष्मी, आर. (1985). प्रारम्भिक तमिलकम में धर्म और समाज. इंडियन हिस्टॉरिकल रिव्यू, 12.
3. ज़्वेलेबिल, के. (1983). मुरुगन उपासना की मिथकीय–काव्यात्मक परंपराएँ. जर्नल ऑफ़ तमिल स्टडीज़, 23.
4. वेंकट्रमण, जी. (1995). मुरुगन: द तमिल गॉड. भारतीय विद्या भवन.
5. शास्त्री, एच. के. (1934). मुरुगन मंदिरों से प्राप्त अभिलेख. एपिग्राफिया इंडिका, 22.
6. सुब्रमणियन, टी. एन. (2001). द्रविड़ मंदिर स्थापत्य का विकास. साउथ एशियन स्टडीज़, 17(2).
7. सुन्दरराजन, एस. (1997). तमिल मुरुगन मंदिरों में प्रतीकवाद. जर्नल ऑफ़ तमिल स्टडीज़, 51.
8. साउंडरराजन, एस. (1988). पाण्ड्यकालीन प्रारम्भिक शैलकृत मंदिर. आर्ट एंड आर्कियोलॉजी रिसर्च पेपर्स, 29.
9. वैगनर, पी. (2004). विजयनगर शासन में मंदिर संरक्षण. साउथ एशियन स्टडीज़, 20(2).
10. नागस्वामी, आर. (1983). दक्षिण भारतीय प्राचीन मंदिर कला की उत्कृष्ट कृतियाँ. भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण (ASI).
11. कुप्पुरम, जी. (1992). तिरुचेंदूर मंदिर की समुद्री परंपराएँ. आर्ट एंड आर्कियोलॉजी रिसर्च पेपर्स, 33.
12. हडसन, डी. (2011). सुब्रह्मण्य (मुरुगन) की उपासना. जर्नल ऑफ़ हिन्दू स्टडीज़, 4(1).
13. नायर, एस. (2013). तमिलनाडु में धार्मिक अनुष्ठानिक परंपराएँ. जर्नल ऑफ़ हिन्दू स्टडीज़, 6(2).
14. रामस्वामी, विजया. (2009). दक्षिण भारत में मुरुगन संप्रदाय और पवित्र भू–दृश्य. इंडियन हिस्टॉरिकल रिव्यू, 36(2).
15. कैलासपथी, के. (1980). शास्त्रीय तमिल परंपरा में मुरुगन. जर्नल ऑफ़ तमिल स्टडीज़, 18.
16. ज़्वेलेबिल, कैमिल. (1973). द स्माइल ऑफ़ मुरुगन. ब्रिल.
17. रामचन्द्रन, टी. एन. (1988). प्रारम्भिक तमिलकम में मुरुगन संप्रदाय. इंडियन हिस्टॉरिकल रिव्यू, 15(1).
18. नागस्वामी, आर. (2005). अरुपडै वीडू मंदिरों का सांस्कृतिक महत्व. जर्नल ऑफ़ तमिल स्टडीज़, 67.